बिहार राज्य

बनाम

श्री राजेन्द्र अग्रवाल

18 जनवरी, 1996

[न्यायमूर्ति के. रामास्वामी, न्यायमूर्ति तथा जी०बी० पटनायक]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973

धारा– 482– उच्च न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियां– प्रयोग करना– मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 414 भा०दं०सं० में अपराध का संज्ञान लिया जाना– उच्च न्यायालय द्वारा आदेश को रद्द करना– माना गया, उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय अपने क्षेत्राधिकार से बाहर कार्य किया तथा यह अभिमत व्यक्त किया कि प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं बनता था।

पुलिस द्वारा बी.सी.सी.एल. मे प्रयोग होने वाले लोहे की पटरियों के टुकड़े से भरा ट्रक पाया गया। ड्राइवर ने बताया कि प्रतिवादी के कारखाने से लोड किया गया है और माल को एक कंपनी द्वारा खरीदा गया है। इस लेन देन के संबंध में कोई भी दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया। पुलिस अधिकारी ने एक आख्या तैयार की जिसे प्रथम सूचना रिपोर्ट माना गया। मुकदमा धारा 414 भा०दं०सं० में दर्ज किया गया। विवेचना के पूर्ण होने के पश्चात, प्रतिवादी व अन्य पांच व्यक्ति के विरुद्ध आरोप पत्र मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया। प्रतिवादी द्वारा संज्ञान आदेश को निरस्त किए जाने हेतु उच्च न्यायालय के समक्ष धारा 482 दं०प्र०सं० मे आवेदन दाखिल किया गया। उच्च न्यायालय ने आवेदन स्वीकार किया। क्षुब्ध, राज्य द्वारा अपील का आवेदन किया गया।

अपील स्वीकार करते हुए एवं उच्च न्यायालय के आदेश को निरस्त करते हुए, इस न्यायालय का यह अभिमत है किः–

1.1 धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत न्यायालय की अन्तर्निहित शक्तियों का प्रयोग बहुत संयमित एवं सावधानी से तभी किया जाना चाहिए जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग एवं अन्याय होना दर्शित हो, यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाता है। जहां तक मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान के आदेश का सवाल है, अन्तर्निहित शक्ति का प्रयोग तब किया जाता है जब प्रथम सूचना आख्या अथवा परिवाद में लगाए गए आरोप एवं जांच के दौरान एकत्र किए गए अन्य तथ्यों को साथ में लिए जाने पर कथित अपराध का गठन नहीं करती है। उस स्तर पर न्यायालय के लिए साक्ष्य को स्थानांतरित करना अथवा साक्ष्यों का मूल्यांकन करना एवं इस निष्कर्ष पर पहुंचना की कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है, संभव नहीं है। [747–ए–सी]

1.2. वाद में दायर आरोप पत्र एवं प्रथम सूचना रिपोर्ट के परीक्षण पर यह दर्शित है उच्च न्यायालय साक्ष्य का मूल्यांकन करने की कोशिश में एवं इस निष्कर्ष पर आने पर कोई अपराध नहीं बनता है, में अपने अधिकार क्षेत्र को पार किया है। उच्च न्यायालय द्वारा अपनी अन्तर्निहित शक्ति अंतर्गत धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता का प्रयोग संज्ञान आदेश को रद्द करने में किया जाना पूर्णतः अनुचित है। जबकि प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप एवं आरोप पत्र में दर्शित तथ्य जहां तक प्रतिवादी का प्रश्न है, धारा 414 भा०दं०सं० में अपराध का सृजन होना पाया जाता है।

श्रीमती रुपन देओल बजाज व अन्य बनाम कंवर पाल सिंह गिल व अन्य , जेटी (1995) 7 एससी 299, भरोसा जताया गया।

क्रिमिनल अपिलेट ज्यूरिसडिक्सनः क्रिमिनल अपील सं० 66/1996

पटना उच्च न्यायालय के क्रि.मिस.सं० 475/1992 (आर) में निर्णय व आदेश दिनांकित 05.03.1992

बी.बी. सिंह अपीलार्थी पक्ष के लिए

यू.आर. ललित. ई.सी. विद्यासागर एवं इम्तियाज अहमद प्रतिवादी पक्ष के लिए

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जी.वी. पटनायक द्वारा उदघोषित किया गया, अनुमति प्रदान की गई।

राज्य की यह अपील पटना उच्च न्यायालय के आदेश दिनांकित 05.03.1992 के विरुद्ध निर्देशित है जिस आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने धारा 414 भा०दं०सं० में प्रतिवादी के विरुद्ध किए गए संज्ञान आदेश को रद्द कर दिया गया।

श्री उदय सिंह, पुलिस उप–निरीक्षक, धनबाद पुलिस स्टेशन दिनांक 8.1.1992 को पुलिस स्टेशन में ड्यूटी पर थे। शाम 5.15 बजे दो कांस्टेबल अपने ड्राइवर, खलासी और दो अन्य व्यक्तियों के साथ पंजीकरण संख्या HRX–3125 नंबर का एक ट्रक लेकर आए और बताया कि उन्होंने देखा कि ट्रक तेजी से आ रहा था और रेलवे फाटक को पार कर रहा था और रुकने को कहने के बावजूद भी वाहन नहीं रुका। इसलिए, उन्होंने वाहन का पीछा किया और कुछ देर बाद उसे रोका और पाया कि ट्रक में लोहे की पटरियों के टुकड़े भरे हुए थे जो बीसीसीएल की संपत्ति थे। दस्तावेजों के बारे में पूछताछ करने पर, चालान की एक प्रति दिखाई गई लेकिन कुछ गलत होने का संदेह पर वे व्यक्तियों सहित ट्रक को पुलिस स्टेशन ले आए।

उप–निरीक्षक ने जाँच करने पर पाया कि ट्रक पर लदा अधिकांश लोहा बीसीसीएल में प्रयुक्त ट्रैक ट्रॉली के टुकड़े थे। संदेह होने पर सब–इंस्पेक्टर ने ड्राइवर से पूछा, जिसने बताया कि ट्रक को इस अपील में प्रतिवादी राजेंद्र अग्रवाल के कारखाने से लोड किया गया है और सरायढेला में स्थित एसोसिएट आयरन एंड स्टील कंपनी के मालिक सुरेंद्र अग्रवाल ने इसे खरीदा है। लेकिन वे कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं कर सके। इसके पश्चात उन्होंने पुलिस स्टेशन के इंस्पेक्टर–सह–प्रभारी अधिकारी को एक रिपोर्ट सौंपी जिसमें आरोप लगाया गया कि अभियुक्तगण अंतर्गत धारा 414 भा०दं०सं० अपराध के दोषी हैं और उक्त रिपोर्ट को प्रथम सूचना रिपोर्ट के रुप में प्रयोग किया गया। विचारण के बाद दिनांक 21.1.1992 को प्रतिवादी और पांच अन्य व्यक्तियों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था। 1992 के जीआर केस नंबर 107 में, विद्वान मजिस्ट्रेट ने पुलिस द्वारा प्रस्तुत कागजात और अन्य सभी सुसंगत तथ्यों के अवलोकन पर दिनांक 01.02.1992 को प्रश्नगत अपराध का संज्ञान लिया। इसके बाद प्रतिवादी ने धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत प्रदान न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग में संज्ञान के आदेश को रद्द करने की प्रार्थना करते हुए पटना उच्च न्यायालय की रांची खंडपीठ में आवेदन दायर किया। उक्त आवेदन को 1992 के आपराधिक मामले संख्या 475 के रूप में पंजीकृत किया गया था। विद्वान न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश द्वारा जहां तक प्रतिवादी का संबंध है, मजिस्ट्रेट द्वारा लिए गए संज्ञान आदेश को रद्द कर दिया है, राज्य द्वारा इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री बी.बी. सिंह ने तर्क दिया कि राज्य ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर साक्ष्य की सराहना करने की कोशिश करके और उसके बाद यह निष्कर्ष दर्ज करके कि प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं है, आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 482 दं०प्र०सं० के तहत अपने अधिकार क्षेत्र को पार कर लिया है। श्री सिंह ने आगे तर्क दिया कि इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सर्वमान्य सिद्धांत कि धारा 482 के तहत शक्ति का प्रयोग बहुत संयमित और केवल तभी किया जाना चाहिए और केवल तभी जब अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग हुआ है, लेकिन मामले में विद्वान न्यायाधीश ने अपीलीय न्यायालय के रुप में संज्ञान आदेश की वैधता की जांच की और इस तरह उच्च न्यायालय का आदेश कानून में संधारणीय नहीं है। दूसरी ओर प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री यू.आर. ललित ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने तथ्यों की जांच की और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि रिकॉर्ड पर मौजूद तथ्यों पर भारतीय दंड संहिता की धारा 414 के तहत अपराध नहीं बनता है, न्यायालय द्वारा संज्ञान के आदेश को रद्द करना पूरी तरह से उचित था और इस न्यायालय द्वारा उस आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

इस न्यायालय द्वारा कई मामलों में यह माना गया है कि धारा 482 दं०प्र०सं० के तहत न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का उपयोग बहुत संयमित और सावधानी से तभी किया जाना चाहिए जब अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यदि ऐसी शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाता है तो स्पष्ट अन्याय होगा या अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। जहां तक मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान के आदेश का सवाल है, अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग तब किया जा सकता है जब प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप और उनके अंकित मूल्य पर ली गई जांच के दौरान एकत्र की गई अन्य सामग्री कथित अपराध का गठन नहीं करती है। उस स्तर पर अदालत के लिए सबूतों को स्थानांतरित करना या सबूतों की सराहना करना और इस निष्कर्ष पर पहुंचना संभव नहीं है कि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है। इस न्यायालय के एक अद्यतन निर्णय में, जिसमें हममें से एक (माननीय के.

रामास्वामी, जे.) सदस्य थे, यह पहले के निर्णय का अनुसरण करते हुए आयोजित किया गया है, श्रीमती रूपन देयोल बजाज एवं अन्य बनाम कंवर पाल सिंह गिल और अन्य। (जेटी 1995 (7) एससी 299) :

> 'इस प्रकार यह स्थापित कानून है कि उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग आपवादिक है। प्रथम सूचना रिपोर्ट/आरोप/परिवाद की जांच शुरू करने से पहले उच्च न्यायालय को अत्यंत सावधानी बरतनी चाहिए। यह तय करने में कि क्या यह मामला दुर्लभतम मामलों में से दुर्लभतम है, जिससे अभियोजन की शुरुआत में ही विफलता हो, उसे पहले इस बात की जांच करनी होगी कि क्या आरोप अपराध का गठन करते हैं। यह अवश्य याद रखना चाहिए कि प्रथम सूचना रिपोर्ट मशीनरी को केवल चलाने और संज्ञेय अपराध की विचारण करने के लिए केवल शुरुआत है। विचारण समाप्त होने और आरोप पत्र दाखिल होने के बाद अभियोजन पक्ष धारा 161 दं०प्र०सं० के तहत दर्ज गवाहों के बयान आरोप पत्र के समर्थन में पेश करता है। उस स्तर पर अभियोजन मामले के पक्ष और विपक्ष पर विचार करना या अनिवार्य माने जाने वाले प्रावधानों के गैर अनुपालन के प्रभाव एवं इसके सख्त अनुपालन की आवश्यकता पर विचार करना न्यायालय का कार्य नहीं है। विचारण समाप्त होने के बाद ऐसा किया जाएगा, अदालत को प्रथम दृष्टया आरोप–पत्र में दिए गए कथनों और उसके समर्थन में रिकॉर्ड पर मौजूद गवाहों के बयानों पर विचार करना होगा कि क्या अदालत उस साक्ष्य के आधार पर अपराध का संज्ञान ले सकती है और विचारण को दुर्भावनापूर्ण प्रक्रिया की शुरुआत आगे बढ़ा सकती है। यदि यह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि कोई संज्ञेय अपराध नहीं बनता है तो आरोप पत्र को रद्द करने के अलावा कोई अन्य कार्रवाई नहीं की जा सकती है। लेकिन केवल आपवादिक मामलों में दुर्भावनापूर्ण प्रक्रिया की शुरुआत विरल से विरलतम मामलों में, आपराधिक निजि
>
> प्रतिशोध भड़काने वाली प्रक्रिया जो परिवाद अथवा प्रथम सूचना रिपोर्ट के आधार पर एकदम संज्ञेय अपराध का सृजन नहीं करती है– न्यायालय तब प्रतिफल का आरंभ कर सकती है एवं शक्ति का प्रयोग कर सकती है।
>
> जब धारा 482 दं०प्र०सं० के तहत उपचार उपलब्ध है, तो उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्ति का प्रयोग करने में अनिच्छुक और सतर्क होगा क्योंकि संहिता की धारा 482 के तहत प्रभावकारी उपचार उपलब्ध है। जब न्यायालय धारा 482 दं०प्र०सं० के तहत अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करता है। मुख्य विचार केवल यह होना चाहिए कि क्या शक्ति का प्रयोग न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा या यह अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। जब जांच अधिकारी सबूत इकट्ठा करने और अदालत के समक्ष आरोप–पत्र पेश करने में काफी समय बिताता है, तो आरोप–पत्र को रद्द करने के लिए अंतर्निहित शक्ति का सहारा लेकर आगे की कार्रवाई में बाधा नहीं डालनी चाहिए। अपराधी के खिलाफ कार्यवाही करके सामाजिक स्थिरता और व्यवस्था को विनियमित करने की आवश्यकता है क्योंकि यह समग्र रूप से समाज के खिलाफ अपराध है। अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग शुरू करने से पहले इस प्रमुख सिद्धांत को हमेशा ध्यान में रखा जाना चाहिए।

उपरोक्त मापदंडों को ध्यान में रखते हुए यदि मौजूदा मामले में दायर आरोप पत्र और प्रथम सूचना रिपोर्ट परीक्षित किया जाता है और उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश का परीक्षण किया जाता है, यह निष्कर्ष अपरिवर्तनीय हो जाता है कि उच्च न्यायालय ने सबूतों का मूल्यांकन करने की कोशिश करके और इस निष्कर्ष पर पहुंचकर कि कोई अपराध नहीं बनता है, अपने अधिकार क्षेत्र से आगे निकल गया। रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री और उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय की जांच करने पर हमारी सुविचारित राय है कि उच्च न्यायालय द्वारा धारा 482 दं०प्र०सं० के तहत अपनी अंतर्निहित शक्ति का उपयोग कर संज्ञान आदेश को रद्द करना पूरी तरह से अनुचित था क्योंकि प्रथम सूचना रिपोर्ट में आरोप और आरोप पत्र में तात्विक सामग्री भारतीय दंड संहिता की धारा 414 के तहत अपराध बनता है, जहां तक प्रतिवादी का संबंध है। उपरोक्त आधार पर आपराधिक प्रकीर्ण संख्या 475/1992 में पारित उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 5.3.1992 के आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाता है और इस अपील को स्वीकार किया जाता है। मजिस्ट्रेट को प्रतिवादी के खिलाफ मुकदमा आगे बढ़ाने का निर्देश दिया जाता है। प्रतिवादी अब मजिस्ट्रेट के सामने उपस्थित हो सकता है।

(अपील स्वीकार्य)

प्रीतिमाला चतुर्वेदी
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट,
बलरामपुर, उत्तर प्रदेश